RNI No.: DEL/BIL/2004/14598

Youngster

YOUNGSTER · ESTABLISHED 2004 · NEW DELHI · FEB 2021 · PAGES 4 · PRICE 1/- · MONTHLY BILINGUAL (HIN./ENG.)

आज के दौर में पंडित दीनदयाल उपाध्याय की पत्रकारिता और भी प्रासंगिक है

किसी ने सच ही कहा है कि कुछ लोग सिर्फ समाज बदलने के लिए जन्म लेते हैं और समाज का भला करते हुए ही खुशी से मौत को गले लगा लेते हैं। उन्हीं में से एक हैं दीनदयाल उपाध्याय, जिन्होंने अपनी पूरी जिन्दगी समाज के लोगों को ही समर्पित कर दी। पंडित दीनदयाल उपाध्याय को साहित्य से एक अलग ही लगाव था शायद इसलिए दीनदयाल उपाध्याय अपनी तमाम जिन्दगी साहित्य से जुड़े रहे। उनके हिंदी और अंग्रेजी के लेख विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहते थे। केवल एक बैठक में ही उन्होंने 'चंद्रगुप्त नाटक' लिख डाला था। दीनदयाल उपाध्याय ने लखनऊ में राष्ट्र धर्म प्रकाशन नामक प्रकाशन संस्थान की स्थापना की और अपने विचारों को प्रस्तुत करने के लिए एक मासिक पत्रिका राष्ट्र धर्म शुरू की। बाद में उन्होंने 'पांचजन्य' (साप्ताहिक) तथा 'स्वदेश' (दैनिक) की शुरुआत की। दीनदयाल उपाध्याय एक विचारक, प्रचारक, विस्तारक, राष्ट्रषि, संपादक, पत्रकार अर्थशास्त्री, समाजसेवी, एक प्रखर वक्ता, शिक्षाविद तथा अपूर्व संगठनकर्ता थे। उन्होंने अहोरात्र भारत माता की सेवा करते–करते अपने जीवन को होम कर दिया। दीनदयाल जी ने लेखन तथा संपादन की शिक्षा, आज के महाविद्यालयों–विश्वविद्यालयों से नहीं लिया था। उन्होंने 'ऑर्गेनाइजर में 'पॉलिटिकल डायरी तथा 'पांचजन्य में 'विचार–विथि नाम से नियमित स्तंभों का लेखन किया। उन्होंने भारतीय सभ्यता–संस्कृति पर होने वाले प्रहारों से व्यथित होकर लेखनी को चुना। वे लेखकों के लेखक तथा संपादकों के संपादक थे। जिनके मार्गदर्शन में मा. अटलबिहारी वाजपेयी, राजीव लोचन अग्निहोत्री, देवेन्द्र स्वरूप तथा भानुप्रताप शुक्ल ने पत्रकारिता के क ख और ग को सीखा।

आज जहां पत्रकारिता मिशन, प्रोफेशन से चलकर कमीशन में बदल गयी है। ऐसे समय में दीनदयाल उपाध्याय और पत्रकारिता के प्रति उनकी विहंगम सामाजिक दृष्टि का महत्व और बढ़ जाता है। आज जहां 'पेड न्यूजों की चारों तरफ भरमार हैं, समाचार–विचार पर विज्ञापन तथा कमीशन रूपी बाजार का बोलबाला है ऐसे समय मूल्यपरक पत्रकारिता हेतु दीनदयाल जी की प्रासंगिक और बढ़ जाती है।

समग्र अथवा एकात्म दृष्टि से मानव जीवन के सभी आयामों को देखने, समझने और जीने की अद्भुत क्षमता के धनी थे पंडित दीनदयाल उपाध्याय। पत्रकारिता को भी उन्होंने इसी दृष्टि से एक दिशा दी। वे स्वयं कभी संपादक या औपचारिक संवाददाता नहीं रहे। उन्होंने संपादकों एवं संवाददाताओं को सजीव सान्निध्य एवं सहचर्य प्रदान किया। तभी संपादक व पत्रकार उन्हें सहज ही अपना मित्र एवं मार्गदर्शक मानते थे।

पत्रकार के नाते आदरणीय पंडित जी का योगदान अनुकरणीय था। वे पत्रकार थे किंतु कार्ल मार्क्स ने जिस श्रेणी को जर्नलिस्टिक थिंकर कहा है, उस श्रेणी में आप नहीं थे। उनकी पत्रकारिता केवल समकालीन परिस्थितियों में ही उपयुक्त हो, ऐसी नहीं थी। उनकी पत्रकारिता तो सुदूर भविष्य तक उपयोगी रहने वाली पत्रकारिता थी। पंडित दीनदयालजी निःसंदेह एक महान पत्रकार थे। वे पेटू पत्रकार नहीं थे। वे चाटुकार नहीं थे। वे लकीर के फकीर

नहीं थे। वे आत्मसाक्षात्कारी थे। अपनी पैनी लेखनी द्वारा आत्मा की आवाज ही प्रस्फुटित करते थे। इसलिए उनकी लिखी बातें पाठकों के हृदय को छू जाती थीं। उनका लेखन कभी उथला या छिछला नहीं रहा। हर छोटी बड़ी घटना में वे चिरंतन मूल्य खोजते थे और उन्हें शब्दांकित करते थे। लिखते समय मानो उनकी समाधि लग जाती थी। जनकल्याण व देषहित उनकी लेखनी में हमेशा सर्वोपरि रहता था।

उनकी गणना उस समय के प्रतिष्ठित पत्रकारों में भी होती थी। उनके पत्रकारीय व्यक्तित्व को समझने के लिए सर्वप्रथम यह बात ध्यान में रखनी होगी कि दीनदयाल जी उस युग की पत्रकारिता का प्रतिनिधित्व करते थे जब पत्रकारिता एक मिशन होने के कारण आदर्श थी, व्यवसाय नहीं।

स्वाधीनता आंदोलन के दौरान अनेक नेताओं ने पत्रकारिता के प्रभावों का उपयोग अपने देश को स्वतंत्रता दिलाकर राष्ट्र के पुनर्निर्माण के लिए किया। विशेषकर हिन्दी एवं अन्य भारतीय भाषायी पत्रकारों में खोजने पर भी ऐसा सम्पादक शायद ही मिले जिसने अर्थोपार्जन के लिए पत्रकारिता का अवलम्बन किया हो।

किसी भी प्रकार के लेखन के प्रति उनकी दूरदृष्टि रहती थी, अपने एक लेख के माध्यम से दीनदयाल जी कहते हैं– चुगलखोर और संवाददाता में अंतर है। चुगली जनरुचि का विषय हो सकती है, किन्तु सही मायने में वह संवाद नहीं है। संवाद को सत्यम्, शिवम् और सुंदरम् तीनों आदर्शों को चरितार्थ करना चाहिए। केवल सत्यम् और सुंदरम् से ही काम नहीं चलेगा। सत्यम् और सुंदरम् के साथ संवाददाता शिवम् अर्थात् कल्याणकारी का भी बराबर ध्यान रखता है। वह केवल उपदेशक की भूमिका लेकर नहीं चलता। वह यथार्थ के सहारे वाचक को शिवम् की ओर इस प्रकार ले जाता है की शिवम् यथार्थ बन जाता है। संवाददाता न तो शून्य में विचरता है और न कल्पना जगत की बात करता है। वह तो जीवन की ठोस घटनाओं को लेकर चलता है और उसमें से शिव का सृजन करता है।"

पिछले लगभग 200 वर्षों की पत्रकारिता के इतिहास पर यदि हम गौर करें तो स्पष्ट हो जाता है कि इस इतिहास पर विभाजन रेखा खींच दी जाती है, स्वतन्त्रता के पहले की पत्रकारिता और स्वतंत्रता के बाद की पत्रकारिता। स्वतंत्रता के पहले की पत्रकारिता को कहा जाता है कि वह एक व्रत था और स्वतंत्रता के बाद की पत्रकारिता को कहा जाता है कि वह एक वृत्ति है। यानी व्रत समाप्त हो गया है और वृत्ति आरम्भ हो गई। जो दोष आज हम पत्रकारिता में देखते हैं, उनकी तरफ दीनदयाल जी अपने बौद्धिक और लेखों के माध्यम से इशारा किया करते थे।

वर्तमान पत्रकारिता का जब हम अवलोकन करते हैं तो उपरोक्त कथन ठीक मालूम पड़ता है कि पत्रकारिता वृत्ति बन गई है। दीनदयाल जी आजादी के बाद के पत्रकारों में भी थे। लेकिन आजादी के बाद भी दीनदयाल जी पत्रकारों के पत्रकार और सम्पादकों के सम्पादक थे। उनकी पत्रकारिता में उन वृत्तियों का कहीं पता नहीं चलता है। यहां तक कि कोई लक्षण भी देखने को नहीं मिलता है जिनसे आज की पत्रकारिता ग्रसित है।

उनकी जीवनी का मंत्र चरैवेति रहा। दीनदयाल जी ने पत्रकारिता द्वारा अपने लेखन के रूप में भारत को भारत से परिचय कराया। ऐसे विलक्षण, मनीषी और पत्रकार थे दीनदयाल जी। स्वतंत्र भारत में मिशनरी पत्रकारिता के अग्रणी पुरुष दीनदयाल जी ने जो नींव डाली थी, उसी पर आगे बढ़ते हुए अक्षरशः हजारों पत्रकार भारत के अगले दौर की यात्रा का पथ निर्माण कर रहे हैं। सही अर्थों में दीनदयाल जी संपादकों के संपादक थे, भारतीय पत्रकारिता के लिए वे आज भी प्रेरणा पुंज हैं और उनकी पत्रकारिता रूपी दृष्टि आज भी वर्तमान समय के हिसाब से शत–प्रतिशत प्रासंगिक सिद्ध होती है।

-आतिश कुमार

डिजिटल मीडिया की चुनौती का डट कर सामना कर रहे हैं समाचार-पत्र

स्माचार पत्रों का आधुनिक स्वरूप व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकताओं, उपलब्धियों, मध्यवर्गीय संभावनाओं, लोकतांत्रिक इच्छाओं, व्यक्ति स्वातंत्रय और व्यावसायिक मानदंडों के विकास का प्रतिफल है। सामाजिक प्राणी बनने के साथ ही मनुष्य के लिए संचार ने एक आधारभूत आवश्यकता का रूप ले लिया था। आरंभ में सूचना संचार के निमित्त व्यक्ति ही 'समाचारपत्र का काम करता था, लेकिन जल्दी ही आवश्यकता ने आविष्कार को जन्म दे दिया और ईसा पूर्व 59 में रोम में श्एक्सा दिउरना' (रोज की घटनाएं) नाम के इश्तहार का रोजाना प्रकाशन किया जाने लगा। रोम के तत्कालीन शासक जूलियस सीजर का आदेश था कि यह इश्तहार शहर के सभी हिस्सों में उपलब्ध कराया जाना चाहिए। मुद्रित समाचारपत्र का पहली बार जिक्र सन् 748 ईसवीं में मिलता है, जब चीन में लकड़ी से बने उलटे अक्षरों पर स्याही लगाकर उनसे कागज पर छापने का काम किया गया। चीन की इस उपलब्धि का कारण था कागज की खोज। चीन में होती नाम के हान वंश के सम्राट के शासन काल में कागज बनाने के प्रयोगों में सफलता मिलने लगी थी। यह ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी की बात है। ये प्रयोग सम्राट होती के एक प्रमुख दरबारी त्साई लुन द्वारा किए गए थे। इसी के साथ चीन में छोटे पैमाने पर कागज के निर्माण की सफल शुरूआत हो चुकी थी। हालांकि इतिहासकारों के अनुसार इससे पहले मिस्र एवं यूनान में कागज बनाने के प्रयोग किए जा चुके थे। मिस्रवासियों ने श्सिपरस पेपीरस' नामक पेड़ के तने को नील नदी के दलदल में नरम करके या गला कर उससे कागज बनाने के प्रयोग किए थे। पेपीरस से ही पेपर अर्थात् कागज शब्द अस्तित्व में आया। संभवतः यह वही समय था, जब भारत में लिखने के उद्देश्य से भोज तथा कुछ दूसरे वृक्षों के पत्तों को काम में लाया जाता था।इन आरंभिक प्रयासों और सफलताओं के बावजूद विधिवत मुद्रित समाचारपत्र तभी अस्तित्व में आए, जब 1447 में जर्मनी के स्वर्णकार जोहान गुटनबर्ग ने प्रिंटिंग प्रेस का आविष्कार करने में सफलता प्राप्त कर ली। गुटेनबर्ग ने धातु के अक्षरों को उलटी आकृति में ढालकर मशीन द्वारा मुद्रण का और इस प्रकार ज्ञान के प्रचार–प्रसार के एक नए युग का सूत्रपात किया। इस आविष्कार के दो वर्ष के भीतर ही 42 पंक्तियों वाली बाइबिल सफलतापूर्वक छापी गई, जिसकी संख्या बहुत थोड़े समय में कई लाख तक पहुंच गई। जल्दी ही इस क्रांति ने मुद्रण उद्योग के द्वार खोल दिए और समाचार पत्र व पत्रिकाएं तथा पुस्तकों के एक नए संसार की रचना होने लगी। बढ़ते व्यापार और कारोबार के साथ तालमेल बैठाते हुए समाचारपत्रों में वाणिज्य और व्यवसाय से संबंधित समाचारों को अधिकाधिक स्थान दिया जाने लगा। इसी दौरान फ्रांस में डाक व्यवस्था की शुरूआत और इंग्लैंड में कागज मिल की स्थापना हुई। 1609 में जर्मनी में 'अविसा रिलेशन आर्डर जीतुंग' नाम से यूरोप के पहले नियमित समाचारपत्र का प्रकाशन भी आरंभ हुआ, लेकिन 1665 में प्रकाशित 'लंदन गजट' को ही पहला वास्तविक समाचारपत्र माना गया। इसमें पहली बार डबल कॉलम में समाचार छापने का प्रयोग किया गया। यह पत्र आज भी निकलता है। समाचारपत्रों के बुनियादी विकास और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ प्रकाशन की नींव 17वीं शताब्दी में पड़ी। इस काल में जर्मनी के अलावा फ्रांस, बेल्जियम और इंग्लैड में भी नियमित पत्रों का प्रकाशन होने लगा। इस शताब्दी के उत्तरार्द्ध के अखबारों की मुद्रित सामग्री में भी पाठकीय रूचि के अनुरूप परिवर्तन होने लगा। अब स्थानीय मुद्दों को और अधिक प्रमुखता दी जाने लगी। हालांकि अभी ज्यादातर अखबारों के लिए सेंसरशिप जैसी स्थितियां बरकरार थीं। स्वीडन दुनिया का पहला ऐसा देश था, जिसने 1766 में प्रेस की स्वतंत्रता की रक्षा के उद्देश्य से कानून बनाया।

इसी समय भारत में भी पत्रकारिता की नींव पड़ी। 29 जनवरी 1780 में एक धनी अंग्रेज यात्री जेम्स आगस्टस हिकी ने 'बंगाल गजट' के नाम से देश का पहला समाचारपत्र प्रकाशित किया। हिकी ने अंग्रेज शासकों के कारनामों की ऐसी पोल खोली कि उसे झूठे मामलों में जेल की यात्रा भी करनी पड़ी, लेकिन उसने पत्रकारिता की आजादी के लिए संघर्ष किया और जुर्माना भी भरा। हिकी ने 'बंगाल गजट' के बाद एक 'अन्य अंग्रेज विलियम ड्यून ने 'बंगाल जनरल' के नाम से 1785 में एक और पत्र निकाला। 1785 में ही मद्रास से एक अन्य अंग्रेज वॉयड ने 'मद्रास क्रूरियर' शुरू किया। 1789 में मुंबई से 'बॉम्बे हेराल्ड' नाम से पहला पत्र निकला। मुंबई से ही 1790 में श्बॉम्बे कूरियर' और श्बॉम्बे गजट' का प्रकाशन शुरू हुआ।वर्ष 1844 में टेलीग्राफी के आविष्कार ने समाचारपत्रों की दुनिया का नक्शा ही बदल दिया। इससे मिनटों में सूचना संप्रेषण की सुविधा हासिल हो गई और यथार्थपरक रिपोर्टिंग तथा समय रहते सूचना संप्रेषण संभव हो सका। इस मध्य औद्योगिक क्रांति ने भी समाज में अनेक परिर्वतनों के द्वारा खोले और समाचारपत्र भी उसके प्रभाव से अछूते नहीं रहे। उनकी संख्या और पाठकों की तादाद दोनों में भारी वृद्धि हुई।

ठसी बीच अखबार के लिए एक अलग किस्म के कागज के आविष्कार में सफलता हाथ लगी। 1838 में हैलीफैक्स के चार्ल्स फेनरटी को न्यूज प्रिंट बनाने में कामयाबी मिली। चार्ल्स साधारण कागज बनाने के लिए रद्दी और चीथड़ों की मात्रा का सही अनुपात बैठाने की कोशिश कर रहा था कि अकस्मात लकड़ी की लुगदी से कागज की ऐसी किस्म बनाने में सफलता मिल गई, जो अखबार छापने के लिए बहुत उपयोगी था। हालांकि चार्ल्स ने इसका पेटेंट कराने की व्यावसायिक सूझबूझ नहीं दिखाई और इस खोज को कुछ दूसरे लोगों ने अपने नाम लिखा लिया। 19वीं सदी के ही तीसरे दशक में हिंदी की यशस्वी और संस्कारवान पत्रकारिता की आधारशिला रखी गई। 30 मई 1826 को युगलकिशोर शुक्ल ने साप्ताहिक पत्र 'उदंत मार्तंड' शुरू किया। यह पत्र समाचार चयन, भाषा और सामाजिक सरोकारों की दृष्टि से परंपरा और नए आदर्शों का वाहक बना। लगभग इसी समय महान सुधारवादी नेता राजा राममोहन राय भाषाई पत्रकारिता के लिए उर्वर जमीन तैयार कर रहे थे। उन्होंने बंगला के साथ–साथ अंग्रेजी में भी पत्रों का प्रकाशन किया। सदी के इसी दशक में ऐसे भारी–भरकम प्रिंटिंग प्रेस बनाए जा सके, जो एक घण्टे में 10 हजार मुकम्मल अखबार छापने की क्षमता रखते थे। इन्हीं दिनों फोटोग्राफी की तकनीक भी ईजाद की गई। उसका इस्तेमाल करते हुए पहली बार कई स्थानों से सचित्र साप्ताहिक समाचारपत्र निकाले जाने लगे। 19वीं शताब्दी के मध्य तक समाचार पत्रों ने समाज में अपना विशिष्ट और महत्वपूर्ण स्थान बना लिया। वे सूचनाओं को ग्रहण करने और उनका प्रसारित करने का मुख्य माध्यम बन गए।

1890 से 1920 के बीच के तीन दशकों के समाचारपत्र उद्योग का स्वर्णिम काल कहा जा सकता हैं। इस दौरान विलियम रेनडॉल्फ हर्स्ट, जोसेफ पुलित्जर और लॉर्ड नॉर्थक्लिफ के प्रकाशन साम्राज्य स्थापित हुए। इतना महत्व और विश्वसनीयता हासिल करने के बाद आंदोलन और क्रांति के संवाहक की भूमिका भी समाचारपत्र निभाने लगे। इसका एक उल्लेखनीय उदाहरण 1900 में लेनिन द्वारा प्रकाशित 'इस्क्रा' (चिनगारी) हैं। इसी प्रकार 21 जून 1925 को वियतनाम में 'थान नियन' मार्क्सवाद के प्रचार के उद्देश से निकाला गया। भारत में भी हिंदी, अंग्रेजी एवं अन्य भाषाओं के समाचार पत्र एवं पत्रिकाएँ तेजी से प्रकाशित होने लगे और यह क्रम 21वीं सदी में निरंतर जारी है। भारत में आज समाचारपत्र उद्योग का रूप ले चुका है।

वर्ष 1920 में रेडियो के प्रादुर्भाव ने समाचारपत्रों को समाज में सूचना के प्रमुख वाहक की अपनी भूमिका पर गंभीरता से पुनर्विचार करने के लिए विवश कर दिया। रेडियो के रूप में सूचना के रास्ते और सर्वसुलभ साधन के बाद इस चर्चा ने जोर पकड़ लिया कि यह नई सुविधा समाचारपत्र उद्योग को धराशायी कर देगी। इस चुनौती का सामना करने के लिए अखबारों ने अपने रूप–रंग और सामग्री में परिवर्तन लाते हुए स्वयं को अधिक पठनीय, ज्यादा विचारपूर्ण और ज्यादा खोजपूर्ण सामग्री के साथ प्रस्तुत किया। समाचारपत्र अभी इस चुनौती से निपट ही पाए थे कि उससे भी ज्यादा ताकतवर और प्रभावशाली माध्यम के रूप में टेलीविजन ने और अधिक गंभीर चुनौती पेश कर दी। तकनीक के विस्तार और विकास के साथ–साथ समाचारपत्रों ने भी अपने रूप–रंग को सुंदर, आकर्षक और दर्शनीय बनाने में कोई कसर नहीं छोड़ी, लेकिन अब फिर एक नई चुनौती मुद्रित मीडिया के सामने आ खड़ी हुई है– पिछली शताब्दी के अंतिम दशक में यह चुनौती इंटरनेट ने पेश की है। इससे पहले कभी भी सूचनाओं का ऐसा महासागर एक साथ इतने लोगों को उपलब्ध नहीं था। फिर भी यह मानना गलत होगा कि इंटरनेट ने समाचारपत्रों की प्रासंगिकता समाप्त कर दी है। अपनी लोकप्रियता, आसान पँहुच, सशक्त रिपोर्टिंग और घटनाओं के सामयिक तथा सटीक विश्लेषण के कारण आज भी समाचारपत्र व्यक्ति के जीवन को बहुत गहराई से प्रभावित करने में सक्षम हैं। एक अनुमान के अनुसार हर दिन करोड़ों व्यक्ति कम से कम एक अखबार अवश्य पढ़ते हैं। वर्तमान में प्रिंट मीडिया इंटरनेट की निरंतर प्रखर होती चुनौती का सामना डट कर कर रहा है।

–ऋषभ अग्रवाल

अनावश्यक सामाजिक दबाव का परिणाम है परीक्षा से लगने वाला डर

सीबीएसई और राज्यों के दसवीं और बारहवीं कक्षा के बोर्ड की परीक्षा शुरू हो रही है। छात्रों के साथ–साथ, उनके माता–पिता भी भारी सामाजकि दबाव में हैं क्योंकि हर पड़ोसी–रिश्तेदार यही कह रहा है कि श्अरे इसका तो बोर्ड है और यह सवाल यहीं खत्म नहीं होता, परीक्षा–परिणाम आने पर भी लोग पूछेंगे कि श्अरे इसके कितने नंबर आये?श हमारे समाज में बोर्ड की परीक्षा का इतना खौफ इसलिए है कि व्यस्क यहीं से बच्चों की औपचारिक तुलना की शुरुआत करते हैं। यह जानते हुए भी कि सभी बच्चे अलग–अलग प्रतिभा और दक्षता लिए होते हैं, लोग उनकी तुलना स्कूल–मोहल्ले–रिश्तेदारों के बच्चों से करते रहते हैं। अब जिसको पत्रकारिता में अपना कॅरियर बनाना है, उसकी इंजीनियरिंग की अभिलाषा रखने वाले छात्र से क्या तुलना ? अब जो क्रिकेट, राजनीति या संगीत में रूचि रखता है उसके ऊपर नंबर लाने का दबाव क्यों होना चाहिए ? जरा सोचिए कि हमारे बच्चे अगर वयस्कों की तुलना दूसरे लोगों से करने लगें कि श्आप वैसे क्यों नहीं बन गएश तो क्या होगा ? क्या नंबर की दौड़ इस बात की गारंटी है कि जो छात्र पढ़ाई में बेहतर प्रदर्शन करता है वह जीवन में भी उतना ही सफल होगा ? अभिभावकों को पीछे मुड़ कर अपने सहपाठियों को देखना चाहिए क्योंकि संभव है उनकी कक्षा का सबसे तेज छात्र, आज अध्यात्म या लेखन से जुड़ गया हो जहाँ नम्बरों की कोई अहमियत नहीं है। दुनिया में अधिकतर नवाचार और नाम करने वाले लोगों से कोई उनकी मार्कशीट नहीं मांगता ? किसने पूछा कि सचिन तेंदुलकर, धोनी, मयंक अग्रवाल या फिर रणवीर सिंह, दीपिका या संजीव कपूर के हाई स्कूल–इंटर में कितने अंक आये थे ? दरअसल, हमारी परीक्षा प्रणाली को बदलने की जरूरत है क्योंकि यह छात्रों को सिर्फ पास और फेल नहीं करती है बल्कि उनकी अच्छे और खराब छात्र के रूप में ब्रांडिंग करती है। फिर स्कूल के द्वारा की गयी ब्रांडिंग को, समाज तुलना करके उसको एक सामाजिक स्वीकृति में बदल देता है। इस कार्य में अधिकांश स्कूलों की भी भूमिका सकारत्मक नहीं रहती है। शुरूआती कक्षाओं से ही स्कूल अपने छात्रों के बारे में तेज, औसत और कमजोर बच्चे की धारणा बना लेता है। अपनी इन धारणाओं को शिक्षक लगातार दोहराते रहते हैं और जाने–अनजाने अपनी इस धारणा को सही शाबित करने का प्रयास भी करते हैं। लेकिन स्कूल से निकलने के बाद अधिकांश छात्र अपने जीवन में और कॅरियर में अपनी जगह बना लेते हैं। सीखना एक प्रक्रिया है और इसमें अनेक फैक्टर होते हैं तो फिर छात्र ही पास–फेल क्यों होंगे ? स्कूल पास–फेल क्यों नहीं होते ? सफलता या असफलता कोई एक स्थाई भाव नहीं होता है। क्या एक स्कूल में या एक कक्षा में सभी छात्र मेधावी हो सकते हैं ? आगे चल कर कोई छात्र क्या करेगा, विज्ञान पढ़ेगा, सामाजिक विज्ञान पढ़ेगा या फिर संगीत सीखेगा, फोटोग्राफी करेगा, कुछ पता नहीं है। जीवन की हर विधा में कोई अव्वल नहीं रह सकता है। अब सोचिये कि अगर परीक्षा प्रणाली में तैरना, साइकिल चलाना, खेल–गीत–संगीत–नाटक आदि सब सम्मिलित कर दिया जाए तो क्या तब भी परीक्षा परिणाम वही होंगे ? सचिन तेंदुलकर से लेकर अमिताभ बच्चन तक ने असफलता का स्वाद चखा है। समाज का सफल से सफल व्यक्ति असफलता की राह से गुजरा हुआ है। तो तुलना छोड़िये क्योंकि तुलना एक प्रकार की कुंठा और हिंसा को जन्म देती है। बच्चे को एक बेहतर इंसान बनाने के लिए प्रेरित करिये। कहिये कि बस परीक्षा दो, घर में नंबर या परिणाम कोई नहीं पूछेगा। बच्चे को उसकी रूचि, सीखने की गति और उपलब्धि के लिए बधाई दीजिये।

–ऋषभ अग्रवाल

THIS MONTH

February 24, 1582 - Pope Gregory XIII corrected mistakes on the Julian calendar by dropping 10 days and directing that the day after October 4, 1582 would be October 15th. The Gregorian, or New Style calendar, was then adopted by Catholic countries, followed gradually by Protestant and other nations.

•••

February 8, 1587 - Mary Stuart, Queen of Scots, was beheaded at Fotheringhay, England, after 19 years as a prisoner of Queen Elizabeth I. She became entangled in the complex political events surrounding the Protestant Reformation in England and was charged with complicity in a plot to assassinate Elizabeth.

•••

February 13, 1635 - Boston Latin School, the first tax-payer supported (public) school in America was established in Boston, Massachusetts.

•••

February 6, 1788 - Massachusetts became the sixth state to ratify the new U.S. Constitution, by a vote of 187 to 168.

Compilation:
Honey Shah

BASICS OF MEDIA

Balanced Line: A pair of ungrounded conductors whose voltages are opposite in polarity but equal in magnitude.

•••

Bias Current: An extremely high frequency AC current, far beyond audibility, added during a tape recording to linearize the magnetic information.

•••

Calibration: Adjusting equipment components for example, a console and a tape recorder according to a standard so that their measurements are similar.

•••

Capacitor Microphone: A microphone that transduces acoustic energy into electric energy electrostatically.

•••

Wipe: Transition in which a second image, framed in some geometric shape, gradually replaces all or part of the first image.

•••

Aliasing: The step like appearance of a computer-generated diagonal or curved line. Also called jaggies or stair steps.

•••

To Be Continued In Next Issue-

Compilation:
Rahul Mittal

आपके शरीर में विटामिन सी की कमी को पूरा कर देंगे ये आहार

यह तो हम सभी जानते हैं कि शरीर के सही तरह से कार्य करने के लिए विटामिन्स का एक अहम स्थान होता है। अगर बात विटामिन सी की हो तो यह न सिर्फ आपकी हड्डियों के लिए आवश्यक होता है बल्कि यह आपकी रोग प्रतिरोधक क्षमता के लिए भी फायदेमंद होता है। इतना ही नहीं, यह हृदय रोग से लेकर कैंसर व अस्थमा जैसी बीमारियों के लिए भी आवश्यक माना जाता है। तो चलिए जानते हैं किन आहार से मिलता है आपको विटामिन सी–

खट्टे आहार

खट्टे आहार जैसे नींबू, संतरा और आंवला आदि कुछ ऐसे आहार हैं, जिन में विटामिन सी प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। बेहतर स्वास्थ्य के लिए इन्हें किसी न किसी रूप में आपको अपने आहार में अवश्य शामिल करना चाहिए।

अंगूर

बहुत कम लोग इस बारे में जानते हैं कि अंगूर में भी विटामिन सी भरपूर मात्रा में पाया जाता है। वैसे इसमें विटामिन सी के अतिरिक्त फाइबर, विटामिन ई और के की प्रचुरता होती है। अगर इसे भोजन में शामिल किया जाए तो यह टीबी, कैंसर और रक्त विकार में काफी राहत पहुंचाता है।

पालक

पालक में आयरन तो प्रचुर मात्रा में होता है ही, साथ ही इसमें विटामिन सी भी मौजूद होता है। वैसे इसमें आपको आयरन व विटामिन सी के अतिरिक्त विटामिन ए, फोलिक एसिड, मैग्नीशियम और बीटा कैरोटिन आदि भी पाया जाता है। कैंसर, आर्थराइटिस और ओस्टियोपोरोसिस के रोगियों को इसका सेवन करने की विशेष रूप से सलाह दी जाती है।

हरी मिर्च

आपको शायद जानकर हैरानी हो लेकिन हरी मिर्च में भी काफी मात्रा में विटामिन सी पाया जाता है। महज 100 ग्राम हरी मिर्च से आपको करीबन 242 एमजी विटामिन सी प्राप्त होता है। इतना ही नहीं, अगर आप एक हरी मिर्च का भी सेवन करते हैं तो इससे आपको 109 एमजी विटामिन सी प्राप्त होगा।

मुनक्का

पालक की तरह ही मुनक्के में भी विटामिन सी की काफी अधिकता होती है। मुनक्के का सेवन न सिर्फ आपको पोषक तत्व प्रदान करता है, बल्कि यह मिनरल के अवशोषण में भी मदद करता है। जिससे आपको मिलने वाला पोषण सही तरह से अवशोषित होकर आपको लाभ पहुंचाता है।

पीली शिमला मिर्च

पीली शिमला मिर्च में विटामिन सी की उच्च मात्रा पाई जाती है। अगर आप महज एक बड़ी पीली शिमला मिर्च को अपनी डाइट का हिस्सा बनाएंगे तो इससे आपको करीबन 341 एमजी विटामिन सी प्राप्त होगा। तो देर किस बात की, आज ही मार्केट जाइए और लाइए यह पीली शिमला मिर्च।

–डोली गर्ग

SARASWATI POOJA CELEBRATED IN TECNIA LIBRARY

Vasant Panchami is a special day for the worship of Maa Saraswati, the goddess of learning and wisdom. On Worship on this date increases learning and wisdom. Not only Hindus but also Jains, Sikhs and Buddhists worship Goddess Saraswati as She is the benefactor of all written and performed arts.. This festival celebrates the onset of the spring season and the day of birth of Goddess Saraswati, who is the Goddess of Knowledge and Learning. Tecnia library celebrated Maa Saraswati Pooja. On this occasion Director sir and all the faculty members and staff were present in the library for worship of Maa Saraswati.

-Anil Kumar Jharotia -Librarian

विदेशी शक्तियों की मदद से चल रहे आंदोलन से आम जनता हो रही है परेशान

सर्वोच्च न्यायालय ने जन–प्रदर्शनों, आन्दोलनों, बन्द, रास्ता जाम, रेल रोको जैसी स्थितियों के बारे में जो ताजा फैसला किया है, उस पर लोकतांत्रिक मूल्यों की दृष्टि से गंभीर चिन्तन होना चाहिए, नयी व्यवस्थाएं बननी चाहिए। भले ही उससे उन याचिकाकर्ताओं को निराशा हुई होगी, जो विरोध–प्रदर्शन के अधिकार के लिए लड़ रहे हैं। कोई भी आन्दोलन जो देश के टुकड़े–टुकड़े कर देने की बात करता हो, लाल किले का अपमान करता हो, 500 पुलिसवालों पर हिंसक एवं अराजक प्रहार करके उन्हें घायल कर देता हो या राष्ट्रीय ध्वज का निरादर करता हो, उसे किस तरह और कैसे लोकतांत्रिक कहा जा सकता है? वही लोकतंत्र अधिक सफल एवं राष्ट्रीयता का माध्यम है, जिसमें आत्मतंत्र का विकास हो, स्वस्था राजनीति की सोच हो एवं राष्ट्र को सशक्त करने का दर्शन हो, अन्यथा लोकतंत्र में भी एकाधिपत्य, अव्यवस्था, अराजकता एवं राष्ट्र–विरोधी स्थितियां उभर सकती है। सत्ता, राजनीति एवं जन–आन्दोलनों के शीर्ष पर बैठे लोग यदि जनतंत्र के आदर्श को भूला दें तो वहां लोकतंत्र के आदर्शों की रक्षा नहीं हो सकती। आज लोकतंत्र के नाम पर जिस तरह के विरोध प्रदर्शन की संस्कृति पनपी है, उससे राष्ट्र की एकता के सामने गंभीर खतरे खड़े हो गये हैं। यह बड़ा सच है कि यदि किसी राज्य में जनता को विरोध–प्रदर्शन का अधिकार न हो तो वह लोकतंत्र हो ही नहीं सकता। विपक्ष या विरोध तो लोकतंत्र का आधार होता है क्योंकि जिस देश की जनता एवं राजनीतिक दल पंगु, निष्क्रिय और अशक्त हो तो वह लोकतांत्रिक राष्ट्र हो ही नहीं सकता। विरोध तो लोकतंत्र का हृदय है और देश की अदालत ने भी विरोध–प्रदर्शन, धरने, अनशन, जुलूस आदि को भारतीय नागरिकों का मूलभूत अधिकार माना है लेकिन उसने यह भी साफ–साफ कहा है कि उक्त सभी कार्यों से जनता को लंबे समय तक असुविधा होती है तो उन्हें रोकना सरकार का अधिकार एवं दायित्व है। विरोध भी शालीन, मर्यादित होने के साथ आम जनजीवन को बाधित करने वाला नहीं होना चाहिए। अदालत की यह बात एकदम सही है, क्योंकि आम जनता की जीवन निर्वाह की स्थितियों को बाधित करना तो उसके मूलभूत अधिकारों का उल्लंघन है। यह सरकार का नहीं, जनता का विरोध है।

चंद प्रदर्शनकारी के धरनों से असंख्य लोगों की स्वतंत्रता बाधित हो जाती है। लाखों लोगों को लंबे–लंबे रास्तों से गुजरना पड़ता है, धरना–स्थलों के आस–पास के कल–कारखाने बंद हो जाते हैं और सैंकड़ों छोटे–व्यापारियों की दुकानें चौपट हो जाती हैं। गंभीर मरीज अस्पताल तक पहुंचते–पहुंचते दम तोड़ देते हैं। शाहीन बाग और किसानों जैसे धरने यदि हफ्तों तक चलते रहते हैं तो देश को अरबों रु. का नुकसान हो जाता है। रेल रोको अभियान सड़कबंद धरनों से भी ज्यादा दुखदायी सिद्ध होते हैं। ऐसे प्रदर्शनकारी जनता की भी सहानुभूति खो देते हैं। उनसे कोई पूछे कि आप किसका विरोध कर रहे हैं, सरकार का या जनता का? प्रश्न यह भी है कि इस तरह के प्रदर्शन से किसका हित सध रहा है, किसानों का या राजनीतिक दलों का?

लम्बे समय से कृषि कानूनों के विरोध में जो किसान आन्दोलन चल रहा है, वह किसानों के हितों का आन्दोलन न होकर राजनीतिक स्वार्थों को सिद्ध करने का षड्यंत्र है, जिसमें अनेक विदेशी शक्तियां देश को कमजोर करने के लिये जुटी हैं। हम व्यवस्था से समझौता कर सकते हैं, लेकिन सिद्धांत के साथ कभी नहीं, किसी कीमत पर भी नहीं। समझ एवं शांति चाहने वाले लोग कहते हैं कि कोई भी आन्दोलन केवल घाव देता है, आखिर तो टेबल पर बैठना ही होता है। शांति को मौका देने की यह बात वे किससे कहते हैं? उनसे जो शांति चाहते हैं या उनसे जो शांति भंग कर रहे हैं? अब हमें देश को कमजोर करने और अलगाववाद के विरुद्ध हमें नये समीकरण खोजने होंगे। उनकी इच्छा का व्याकरण समझना होगा। वे सिर्फ शांति की अपील से आन्दोलन वापस नहीं लेंगे। यदि यह सब इतना आसान होता तो सरकार के बार–बार झुकने एवं किसानों से लम्बे दौर की बातचीत का कोई निष्कर्ष अवश्य सामने आता।

अदालत ने इस तरह के धरने चलाने के पहले अब पुलिस की पूर्वानुमति को अनिवार्य बना दिया है, प्रश्न है कि क्या दिल्ली की सीमाओं पर चल रहे लंबे धरने पर बैठे किसान अब अदालत की सुनेंगे या नहीं? इन धरनों और जुलूसों से एक–दो घंटे के लिए यदि सड़कें बंद हो जाती हैं और कुछ सार्वजनिक स्थानों पर प्रदर्शनकारियों का कब्जा हो जाता है तो कोई बात नहीं लेकिन यदि इन कुचेष्टाओं से मानव–अधिकारों का लंबा उल्लंघन होगा तो पुलिस–कार्रवाई न्यायोचित ही कही जाएगी। क्या पुलिस ऐसी कार्रवाई के लिये सक्षम एवं तत्पर है? क्या सत्ताधारी पार्टी इस तरह का खतरा उठा पाएंगी? देखने में आ रहा है पुलिस देशद्रोह और अशांति भड़काने के आरोपियों पर शिकंजा कसने लगी है। बेंगलुरु की सामाजिक कार्यकर्ता दिशा रवि को तो गिरफ्तार कर लिया गया है और निकिता जैकब और शांतनु को भी जल्दी ही पकड़ने की तैयारी है। इन तीनों पर आरोप है कि इन्होंने मिलकर षड्यंत्र किया और भारत में चल रहे किसान आंदोलन को भड़काया। इतना ही नहीं, इन्होंने स्वीडी नेता ग्रेटा थनबर्ग के भारत–विरोधी संदेश को इंटरनेट पर फैलाकर लाल किला की अस्मिता एवं अस्तित्व को धुंधलाने का सफल प्रयत्न किया। पुलिस ने काफी खोज–पड़ताल करके कहा है कि कनाडा के एक खालिस्तानी संगठन 'पोइटिक जस्टिस फाउंडेशन' के साथ मिलकर इन लोगों ने यह भारत–विरोधी षड्यंत्र किया है। इस आरोप को सिद्ध करने के लिए पुलिस ने इन तीनों के बीच फोन पर हुई बातचीत, पारस्परिक संदेश तथा कई अन्य दस्तावेज खोज लिये हैं। यदि पुलिस के पास ऐसे ठोस प्रमाण है तो निश्चय ही यह अत्यंत आपत्तिजनक और दंडनीय घटना है। अदालत तय करेगी कि इन अपराधियों को कितनी सजा मिलेगी।

राजनीति का अपराधीकरण हो रहा है या अपराध का राजनीतिकरण? आतंकवाद, उग्रवाद, नक्सलवाद के बाद अब यह कौन–सा वाद है? जिस प्रकार उग्रवादियों एवं देशद्रोहियों को एक भाषण, एक सर्वदलीय रैली या जुलूस से मुख्यधारा में नहीं जोड़ा जा सकता, ठीक उसी प्रकार राजनीति दलों की सत्ता की राजनीति किसानों के रोग की दवा नहीं हो सकती। किसान आन्दोलन राजनीतिक दलों की एक जबरन एवं अतिश्योक्तिपूर्ण विडम्बना है। आज राष्ट्रीय जीवन में भी बहुत कुछ आवश्यक विडम्बनाएं हैं। जिनसे संघर्ष न करके हम उन्हें अपने जीवन का अंग मान कर स्वीकार कर लेते हैं। पर यह कोई आदर्श स्थिति नहीं है। राष्ट्र के जीवन में विडम्बनाएं तब आती हैं, जब कुछ गलत पाने के लिए कुछ अच्छे को छोड़ने की तुलनात्मक स्थिति आती है। यही क्षण होता है जब हमारा कर्तव्य कुर्बानी मांगता है। ऐसी स्थिति झांसी की रानी, भगतसिंह से लेकर अनेक शहीदों के सामने थी। जिन्होंने मातृभूमि की माटी के लिए समझौता नहीं किया। कर्तव्य और कुर्बानी को हाशिये के इधर और उधर नहीं रखा।

आज देश के सम्मुख संकट इसलिए उत्पन्न हुआ कि हमारे देश में सब कुछ बनने लगा पर राष्ट्रीय चरित्र नहीं बना और बिन चरित्र सब सून.....। राष्ट्रीयता और शांति चरित्र के बिना ठहरती नहीं, क्योंकि यह उपदेश की नहीं, जीने की चीज है। हमारे बीच गिनती के लोग हैं जिन्हें इस स्थान पर रखा जा सकता है। पर हल्दी की एक गांठ को लेकर थोक व्यापार नहीं किया जा सकता। न राष्ट्रीयता आसमान से उतरती है, न शांति धरती से उगती है। इसके लिए पूरे राष्ट्र का एक चरित्र बनना चाहिए। वही सोने का पात्र होता है, जिसमें राष्ट्रीयता रूपी शेरनी का दूध ठहरता है। वही उर्वरा धरती होती है, जहां शांति का कल्पवृक्ष फलता है। अन्यथा हमारा प्रयास अंधेरे में काली बिल्ली खोजने जैसा होगा, जो वहां है ही नहीं।

-रोहित कुमार

Vol. 16 **No. 2**
RNI No.: DEL/BIL/2004/14598
Publisher: Ram Kailsah Gupta on behalf of Tecnia Institute of Advanced Studies, 3 PSP, Madhuban Chowk, Rohini, Delhi-85; **Printer:** Ramesh Chander Dogra; **Printed at:** Dogra Printing Press, 17/69, Jhan Singh Nagar, Anand Parbat, New Delhi-5
Editor: Rahul Mittal,Bal krishna Mishra responsible for selection of News under PRB Act. All rights reserved.

IMPORTANT QUOTES

"The opposite of a correct statement is a false statement. The opposite of a profound truth may well be another profound truth."

Niels Bohr

•••

"In science one tries to tell people, in such a way as to be understood by everyone, something that no one ever knew before. But in poetry, it's the exact opposite."

Paul Dirac

•••

"Anyone who considers arithmetical methods of producing random digits is, of course, in a state of sin."

John von Neumann

•••

"It is unbecoming for young men to utter maxims."

Aristotle

•••

"Grove giveth and Gates taketh away."

Bob Metcalfe

•••

Compilation:
Priya Kumari

WINNERS v/s LOOSERS Part-90

Winners use hard arguments but soft words; Losers use soft arguments but hard words.

•••

Winners stand firm on values but compromise on petty things; Losers stand firm on petty things but compromise on values.

•••

Winners follow the philosophy of empathy: "Don't do to others what you would, not want them to do to you"; Losers follow the philosophy, "Do it to others before they do it to you."

•••

Winners make it happen; Losers let it happen.

•••

The Winner is always part of the answer; The Loser is always part of the problem.

•••

The Winner always has a program; The Loser always has an excuse.

•••

To Be Continued In Next Issue-

Compilation:
Rahul Mittal

All Students and Faculty are welcome to give any Article, Feature & Write-up along with their Views & Feedback at: **youngstertias@gmail.com**